0974CH02

द्वितीय अध्याय

संज्ञा एवं परिभाषा प्रकरण

व्यावहारिक सुविधा के लिए प्रत्येक व्यक्ति या पदार्थ को किसी न किसी नाम से अभिहित किया जाता है। इसी नाम को संज्ञा भी कहते हैं। व्याकरणशास्त्र में संज्ञाओं एवं परिभाषाओं का बहुत महत्त्व होता है। इनका प्रयोग लाघव के लिए किया गया है। संज्ञाओं एवं परिभाषाओं को समझने से व्याकरण-प्रक्रिया को समझने में सहायता मिलती है। कुछ संज्ञाएँ एवं परिभाषाएँ नीचे दी जा रही हैं—

www.dreamtopper.in

आगम

किसी वर्ण के साथ जब दूसरा वर्ण मित्रवत् पास आकर बैठकर उससे संयुक्त हो जाता है, तब वह आगम कहलाता है (मित्रवदागम:), जैसे— वृक्ष + छाया = वृक्षच्छाया। यहाँ वृक्ष के 'अ' एवं छाया के 'छ' के मध्य में 'च्' का आगम हुआ है।

आदेश

किसी वर्ण को हटाकर जब कोई दूसरा वर्ण उसके स्थान पर शत्रु की भाँति आ बैठता है तो वह आदेश कहलाता है (शत्रुवदादेश:), जैसे— यदि + अपि = यद्यपि, यहाँ 'इ' के स्थान पर 'य्' आदेश हुआ है। यह आदेश पूर्व वर्ण के स्थान पर अथवा पर वर्ण के स्थान पर हो सकता है। पूर्व तथा पर दोनों वर्णों के स्थान पर दीर्घादि रूप में 'एकादेश' भी होता है।

उपधा

किसी शब्द के अन्तिम वर्ण से पूर्व (वर्ण) को उपधा कहते हैं, जैसे— चिन्त् में

'त्' अंतिम वर्ण है और उससे पूर्व 'न्' उपधा है (अलोऽन्त्यात् पूर्व उपधा)। जैसे महत् में अन्तिम वर्ण 'त्' से पूर्ववर्ती 'ह' में विद्यमान 'अ' उपधा संज्ञक है।

पद

संज्ञा के साथ सु, औ, जस् आदि नाम पदों में आने वाले 21 प्रत्यय एवं तिप्, तस्, झि आदि क्रियापदों में आने वाले 18 प्रत्यय विभक्ति संज्ञक हैं। सु, औ, जस् (अः) आदि तथा धातुओं के साथ ति, तस् (तः) अन्ति आदि विभक्तियों के जुड़ने से सुबन्त और तिङन्त शब्दों की पद संज्ञा होती है (सुप्तिङन्तं पदम्), यथा— रामः, रामौ, रामाः तथा भवति, भवतः, भवन्ति। केवल पठ्, नम्, वद् तथा राम इत्यादि को पद नहीं कह सकते। संस्कृत भाषा में जिसकी पद संज्ञा नहीं होती उसका वाक्य में प्रयोग नहीं किया जा सकता है (अपदं न प्रयुञ्जीत)।

निष्ठा

क्त (त) और क्तवतु (तवत्) प्रत्ययों को निष्ठा कहते हैं— 'क्तक्तवतू निष्ठा'। इनके योग से भूतकालिक क्रियापदों का निर्माण किया जाता है, जैसे— गतः, गतवान् आदि।

विकरण

धातु और तिङ् प्रत्ययों के बीच में आने वाले शप् (अ) श्यन् (य) श्नु (नु), आदि प्रत्यय विकरण कहलाते हैं, यथा— भवति में भू + ति के मध्य में 'शप्' हुआ है (भू + अ + ति)। विकरण भेद से ही धातुएँ 10 विभिन्न गणों में विभक्त होती हैं।

संयोग

संस्कृत में 'संयोग' एक महत्त्वपूर्ण संज्ञा के रूप में प्राप्त होता है। यह एक पारिभाषिक शब्द है। महर्षि पाणिनि ने *अष्टाध्यायी* में इसका अर्थ "हलोऽनन्तराः संयोगः" किया है। अर्थात् स्वर रहित व्यञ्जनों (हल्) के व्यवधान रहित सामीप्य भाव को संयोग कहते हैं, यथा— महत्त्व में त्, त् तथा व् का संयोग है। इसी प्रकार—

- रामः उद्यानं गच्छति। उद्यानम् में 'द्' और 'य्' तथा गच्छति में 'च्' और 'छ्' का संयोग है।

- अयं रामस्य ग्रन्थ: अस्ति। रामस्य में 'स्' और 'य्', ग्रन्थ: में 'ग्' + 'र्' तथा 'न्' और 'थ्' तथा अस्ति में 'स्' और 'त्' का संयोग है।

संहिता

वर्णों के अत्यन्त सामीप्य अर्थात् व्यवधान रहित सामीप्य को संहिता कहते हैं (पर: सन्निकर्ष: संहिता)। वर्णों की संहिता की स्थिति में ही सन्धिकार्य होते हैं, जैसे— वाक् + ईश: में 'क्' + 'ई' में संहिता (अत्यन्त समीपता) के कारण सन्धि कार्य करने से 'वागीश:' पद बना है।

सम्प्रसारण

यण् (य्, व्, र्, ल्) के स्थान पर इक् (इ, उ, ऋ, लृ) के प्रयोग को सम्प्रसारण कहते हैं (इग्यण: सम्प्रसारणम्)। जैसे— यज्- इज् → इज्यते, वच्- उच् → उच्यते इत्यादि।

www.dreamtopper.in

अभ्यासकार्यम्

प्र. 1. अधोलिखितपदेभ्यः आगमवर्णान्, आदेशवर्णान् वा स्पष्टीकृत्य पृथक् कुरुत—

यथा— वृक्ष + छाया - वृक्षच्छाया — च् (आगमः)

यदि + अपि - यद्यपि - य् (आदेशः)

i) इति+ आदि - इत्यादि — (..................)

ii) तरु+ छाया - तरुच्छाया — (..................)

iii) अनु + छेदः - अनुच्छेदः — (..................)

iv) अनु+ इच्छति - अन्विच्छति — (..................)

प्र. 2. अधोलिखिततालिकातः पदसंज्ञकपदानि पृथक् कृत्वा लिखत—

सः, पठति, हरि, दृश्, हसामि, चल्, मुनी, चलति, ते।

प्र. 3. अधोलिखिततालिकायां प्रदत्तपदेषु संयोगस्य उदाहाणानि पृथक् कृत्वा लिखत—

महेशः, उष्णः, वागीशः, महत्त्वम्, सज्जनः, क्लेशः, पावकः।

www.dreamtopper.in